यह अनुभव गणित के बारे में प्रचलित मान्यताओं और शिक्षण विधियों पर सवाल खड़े करते हुए बताता है कि किस तरह शिक्षण के तौर-तरीके गणित को बच्चों के लिए मुश्किल, बोझिल और निरर्थक बना देते हैं। नतीजे के तौर पर गणित समझने के बजाय रटने का विषय बन जाता है। यह अनुभव रेखांकित करता है कि यदि गणित शिक्षण में शिक्षक गणितीय तर्क को समझाने में बच्चे की मदद करे तो यह भी रुचिकर विषय हो सकता है।

गणित से मेरा रिश्ता

डॉ. शारदा कुमारी

रात भर बेचैनी रही। दिमाग में बस एक ही बात थी कि कब सुबह हो और कब दूसरों के उठने से पहले गूलरसिद्ध मैया के दर्शन के लिए निकल जाऊं। गूलरसिद्ध मैया का मंदिर हल्द्वानी की ओर मुड़ने वाली सड़क के किनारे खड़ी पहाड़ियों की सबसे ऊंची चोटी पर है। मैया के पास जाने की योजना न जाने कब से मैं बना रही थी। और किसी को भी कानों-कान भनक नहीं होने दी। बताने का मतलब था अपनी खिल्ली उड़वाना। जैसे-तैसे रात कटी। पाकड़ के पेड़ तक जाते-जाते पैर न जाने क्यों रुक गए। सोचा, घर में बताए बगैर जाना ठीक है क्या ? अपने-आप से कोई जवाब ही न सूझ रहा था। किससे सलाह लूं ?

फिर किससे पूछा जाए ? गणित के नंबरों का सवाल है। मैं मन में सोच रही थी कि, बस यह कक्षा किसी तरह से पार हो जाए। उसके बाद तो मुझे पढ़ाई करनी ही नहीं। पर्वतराज हिमालय की तलहटी में बसा है रामनगर। इसे उत्तर में बहती कोसी के किनारे जो पहाड़ियां हैं उन्हीं में से एक की चोटी पर गूलरसिद्ध मैया का मंदिर है। लोगों का कहना है कि ढिकुली के इस पहाड़ पर बैठी गूलरसिद्ध मैया सबकी इच्छाएं पूरी करती है। मेरी मां ऐसा कहने वालों को निकम्मा मानती थी। वे कहती थीं कि जो लोग मेहनत नहीं करते वही मन्नतें मांगते रहते हैं। मैं भी इस बात में अपनी मां का साथ देती लेकिन पिछले कुछ दिनों से लगने लगा था कि इस मैया में कुछ तो दम है तभी तो अतुल गणित में प्रथम आता है। प्रेम, आलोग, अशोक, वंदना, अपर्णा सभी गणित के सवाल कैसे मजे-मजे में कर जाते हैं और ये सब वही लोग हैं जो पेपरों से पहले मैया के दर्शन करने जरूर जाते हैं। मैंने सोचा कि अगर मैं भी जाऊं तो मैया मेरी भी मदद जरूर करेंगी।

मैं ठानकर चली थी कि मैया से दो-तीन बातें तो जरूर मनवाकर ही लौटूंगी। अब तक उनके दर्शन न करने के लिए पहले तो उनसे माफी मांगूंगी। फिर कहूंगी कि मैया, स्कूलों में जो गणित नाम की भयानक-सी चीज है, इसे सीधे मंगलग्रह भेज दो। अगर इतनी शक्ति नहीं है तो कम से कम इतना जरूर करो कि गणित में मेरे नम्बर अच्छे आ जाएं। बाकी विषय तो मुझे बड़े आसान और अपने से लगते हैं, पर गणित तो सिंड्रेला की सौतेली मां से भी कहीं ज्यादा कटखना-सा लगता है। यह विषय मेरे जी का जंजाल बना हुआ था। चौथी-पांचवीं तक तो स्कूल मुझे बहुत अच्छा लगा। पर इसके बाद गणित ने मुझे सताना शुरू किया, उसे मैं ही जानती हूं। स्कूल जाने का सारा मजा ही खत्म हो गया था। सिस्टर मालू, सिस्टर एनी जॉर्ज, सबूही, कादम्बरी, फिसलपट्टियां, कमरख के पेड़, लंच पीरिएड में चॉक लेकर श्यामपट्ट पर चित्रकारी; सबका सब कितना लुभावना था। पर इन सबके बीच जैसे ही गणित की चौथी घंटी व जोशी सर का ख्याल आता तो दम घुटने-सा लगता। देह कुछ

लेखक परिचय

वर्तमान में, दिल्ली की आर. के. पुरम् जिला शैक्षिक प्रशिक्षण संस्थान (डायट) में प्रवक्ता के तौर पर कार्यरत हैं, राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा : 2005 के अनुरूप विकसित हिन्दी की पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति की सदस्या रही हैं।

संपर्क : फ्लैट नम्बर-123, प्रोद्यौगिकी, सैक्टर-3, प्लॉट नम्बर-11, द्वारका, नई दिल्ली-110075

सिहर-सा जाता, भीतर लगता कि सामने कोई विकराल दानव खड़ा है और अभी का अभी मुझे दबोच लेगा। मैं अपने आप को बेचारगी की स्थिति में पाती। मेरी इस बेचारगी को कोई नहीं समझ पा रहा था। मैं खुद भी इस बात को कहां समझ पा रही थी। बस यही सोच-सोच कर लज्जित होती रहती कि देखो मेरे जैसे ही तो बच्चे हैं ये, मेरी ही उम्र के, फिर भी गणित पढ़ लेते हैं। ये कैसे सवाल हल कर पाते हैं ? ये ज्यादा बुद्धिमान हैं क्या ? इनका दिमाग इतना तेज क्यों है ? धीरे-धीरे बात मन में घर कर गई कि जो गणित कर सकते हैं वे वाकई बहुत बुद्धिमान होते हैं। हिंदी, संगीत तो सभी कर सकते हैं। हमारे माता-पिता को भी समझा दिया गया कि गणित-विज्ञान अच्छे से कर पाने वालों का मतलब है बच्चे का आई.क्यू. तेज होना। आई.क्यू. तेज करने के लिए मुझे रोज भीगे बादाम खिलाए जाते। पर गणित में नम्बर टस से मस न होते। मां के भीगे बादाम, पिताजी के तजुरबे, ये सब खास काम न आए। मैंने तो सोचा कि शायद जैसे चाकू की धार तेज की जाती है वैसे ही दिमाग में पड़े आई.क्यू. नाम के अंग को भी तेज करने का औजार मैं ईजाद करूंगी कि जिससे और बच्चों को मेरी तरह परेशानी न झेलनी पड़े। खैर, मेरे बारे में तय हो चुका था कि ‘कमजोर दिमाग है ज्यादा जोर क्यों डालते हो। लड़कियां तो गणित में वैसे भी पीछे रहती हैं। इनके बस का कहां है गणित के समीकरण हल करना।’

मेरा भाई संजीव तो लड़की न था। फिर भी वह गणित में कुछ-कुछ मेरी तरह ही था। जिस तरह के विषय वह पढ़ता उसे लेकर मित्तल सर कहते- ‘अबे ओ फटीचर ! ये क्या लड़कियों की तरह सोश्योलॉजी पढ़ रहा है।’ जोसफ सर भी ऐसा ही बोलते। मेरे मन में यह धारणा गहरे पैठ चुकी थी कि गणित केवल पुरुषों की ही बपौती है। गणित जैसे विषय बुद्धिमान बच्चे ही पढ़ सकते हैं।

मैं बहुत बार सोचती और अपने आप से सवाल करती कैसे बेवकूफ हैं हमारे फादर (स्कूल प्रमुख) ? जब उन्हें पता है कि गणित सिर्फ बुद्धिमान लोगों के ही बूते की बात है और उनमें से भी सिर्फ लड़कों के बस में है तो आखिर हम लड़कियों को यह विषय पढ़ाया ही क्यों जाता है ? यह पहेली मुझे कभी भी समझ नहीं आई कि दसवीं में तो गणित पढ़ाती ही सिस्टर बाफ्लो हैं, वे भी लड़की ही हैं न। फिर वे कैसे पढ़ा पाती हैं गणित। आज कहीं जाकर मुझे मेरे सवालों के उत्तर मिल पाए हैं।

आप पाठकों में से शायद कोई एक भी उन यातनाओं की कल्पना नहीं कर सकता जो मैंने गणित पढ़ने के दौरान सही हैं। इसे किसी प्रकार की अतिश्योक्ति न समझें।

बस्ता संभालते वक्त जब गणित की कॉपी-किताब आतीं तो मन घट-सा जाता। मन घटने का मतलब मैं आपको शब्दों में नहीं समझा सकती। यह तो शुक्र था कि गणित की घंटी कभी पहली होती तो कभी तीसरी या चौथी। यानी लंच से पहले। क्योंकि ऐसा कहा जाता था (अभी भी कहते हैं) कि दिमागी काम सुबह-सुबह तरोताजगी में होना चाहिए। मेरे लिए तो खैर यह बहुत ही अच्छा था। बला जितनी जल्दी निपटे उतना अच्छा। फिर उसके बाद तो मैं उछलती कूदती, चहकती, इठलाती शिक्षकों के गले का हार बनी रहती। लेकिन कई बार स्टाफ रूम जाना होता, जहां जोशी सर मुंह बिचकाते हुए मिस जॉर्ज से कहते- ‘यह तुम्हारी चहेती कैसे है ! यह बहुत ही बुद्धू है ... मैं तुम्हें बता नहीं सकता।’ मुझे ऐसा लगता जैसे हिन्दी फिल्मों का खलनायक प्रेम चौपड़ा मेरे सामने प्रकट हो गया हो। मुझे ऐसा लगता जैसे यह गणित कोई बर्बर किस्म का नरभक्षी राक्षस है और मैं पिंजरे में बंद सहमी हुई पंख फड़फड़ती चिड़िया। कब यह मुझे दबोच खाएगा, इस भय से मैं कपकपाई रहती और इस बात का असर मेरे दूसरे विषयों पर भी पड़ने लगा। इससे पहले कि ‘फेल’ होने जैसी घटना घट जाती, ‘गणित’ के ट्यूशन की बात चल पड़ी। चौधरी मैम, पन्त मैम, बिष्ट मैम इन्हें खारिज कर दिया गया कि ये तो महिलाएं हैं, गणित जैसे विषय के साथ क्या न्याय करेंगी ? और जोशी सर तो पहले हौव्वा लगते थे। किसी ने पिताजी को ‘मित्तल सर’ का नाम सुझाया। बताया गया कि उनसे पढ़ने के बाद लड़के क्या, लड़कियां तक नम्बर ले आती हैं।

इस ट्यूशन के चक्कर में छुपम-छुपाई, इक्कड़-दुक्कड़, विषमृत, कोना-कोना सभी कुछ छूट गया। इस बात का मलाल मुझे आज भी है। पर कुछ पाने के लिए कुछ खोना भी पड़ता है न! ऐसा मुझे बहुतों ने समझाया।

मित्तल साहब की मेहनत रंग लाई। मैंने गणित के होमवर्क में ‘गुड’ लाना शुरू कर दिया। मैं निशान लगे सवालों को उनके सामने रख देती। वे उन्हें हल करते, साथ-साथ यह भी कहते- समझ में आया ? मैं सिर हिलाती जाती। अब मैं सवालों को स्कूल वाली कॉपी में उतारती और हां, उन्हें अक्षरशः रट भी लेती। ईश्वर को धन्यवाद देती कि मुझे उन्होंने दिमाग न सही, पर रटने की ताकत तो अच्छी दी है न। साथ ही धन्यवाद देती पेपर बनाने वाले को। वे पेपर में वही सवाल देते जिन पर मित्तल साहब ‘वैरी इम्पॉरटेंट’ का निशान लगवाते। वैरी इम्पॉरटेंट क्या, मैं तो उन सभी सवालों को रट लेती जिनका हल मित्तल साहब निकाल कर देते, एकदम कॉमा, फुलस्टॉप के साथ। अब मेरे नम्बर अच्छे आने लगे थे चाहे अंकगणित हो या बीजगणित या फिर रेखागणित। रेखागणित में तो खैर पहले भी बदहाली न थी। मैं अपने आप से आज सवाल पूछती हूं-

क्या ट्यूशन पढ़ने से मेरा आई.क्यू. लेवल ऊंचा हो गया था ? या फिर...क्या मैं सवालों में निहित सिद्धांतों को समझने लगी थी ? क्या गणितीय प्रक्रिया की बारीकियों के तार मेरे मानस से जुड़ने लगे थे ? आप शायद चौंक जाएं कि एलसीएम (लघुत्तम समावर्तक) या ब्रैकेट (कोष्ठक) खोलने के पीछे जुड़े नियमों को समझे बगैर मैं अच्छे अंक लाने लगी। इन सबके लिए मैं किसका शुक्रिया अदा करूं ? अपने रटने के कौशल का ? शिक्षा व्यवस्था की मूल्यांकन पद्धति का ? मित्तल साहब की 'वैरी इम्पॉरटेंट' भांपने की अजूबी क्षमता का ? आज मैं जानती हूं, कि उन्होंने मुझे एक छटांक धनिया, सौ ग्राम अदरक का दाम गिनने लायक नहीं बनाया। पर अच्छे से अच्छे अंक दिलवाकर (रटने के कौशल के रहते) प्रथम श्रेणी वाले विद्यार्थियों की कतार से जुड़ने का गौरव तो दिलवाया है। इससे अधिक चाहिए भी क्या ?

यह तो रही मेरे और गणित के आपसी रिश्ते की बात जो कम से कम पैंतीस वर्ष पुराने हो चले हैं। लेकिन जरा बताएं कि क्या आज हालात जरा भी बदले हैं ?

मैं भले ही रटकर पास हुई पर मेरी यह धारणा तो जरूर बदली है कि- गणित सिर्फ लड़कों की बपौती नहीं। गणित जानने वाले ही 'सुपर इंटेलीजेंट' होते हैं, यह भी धारणा निर्मूल निकली।

मेरी तो अभी अपनी समझ अलग-सी बन गई। पर क्या अभी भी ये धारणाएं कायम नहीं हैं ? बहुत-सी लड़कियां इसी बात के रहते न सिर्फ हीन भावना का शिकार होती हैं बल्कि इसी विषय के डर से स्कूल छोड़ने के लिए बाध्य हो जाती हैं। अभी भी सूचनाएं रटकर उत्तर पुस्तिका में उगल देने वाला पक्ष हमारी मूल्यांकन व्यवस्था में हावी है।

क्या अभी भी छठी कक्षा तक आते-आते अपने बच्चों की नैया पार लगाने के लिए मित्तल साहबों की तलाश शुरू नहीं हो जाती ? यहां सवाल गणित के कठिन होने का है या उसको पढ़ाने के तरीकों और विषय से जुड़े पूर्वाग्रहों का ? जवाब तो ढूंढ़ना ही होगा। ऐसे में याद आती है दुष्यंत की गजल- 'हो गई है पीर परबत सी पिघलनी चाहिए' और हां याद आती है कवि केदारनाथ की बात- 'अगर आठवीं के बाद भी गणित अनिवार्य होता तो मैं आठवीं के आगे पढ़ ही न पाता।'

आज मैं यह समझ पाई हूं कि गणितीय तर्क को समझे बिना गणित के सवालों को हल करने का कोई मतलब नहीं है। लेकिन हमारे पढ़ाने के तरीकों में गणित के लिए एक 'यांत्रिक विधि' का इस्तेमाल होता है। यह यांत्रिक विधि सवाल हल करना तो सिखा देती है लेकिन गणित नहीं सिखा पाती।

गणित के कुछ विद्वानों का मानना है कि गणित संगीत की तरह आनन्द देता है। अब मुझे लगता है कि हर बच्चा गणित सीख सकता है यदि बच्चों की समझ से जोड़ते हुए, संवेदनशील तरीकों और बिना बुद्धिमता की खास जरूरत को गणित के साथ थोपे, बच्चों को इसे पढ़ाया जाए तो बच्चे जरूर इसमें आनन्द ले सकते हैं।

अपने अनुभव से यह बात भी समझ आती है कि गणित शिक्षण में भाषा का प्रयोग बहुत ही अहम है। किसी गणितीय समस्या पर काम करते हुए, बच्चों तक संप्रेषित किस प्रकार किया जा रहा है, गणित शिक्षण में यह खास महत्त्व का सवाल हो जाता है। अक्सर, जिस लापरवाही के साथ गणित पढ़ाते हुए भाषा का इस्तेमाल किया जाता है, वह बच्चों को भ्रमित करता है और यह बच्चों के गणित सीखने में बाधा बनता है।

इसका मतलब यह नहीं है कि गणित की अपनी भाषा को खारिज कर दिया जाए बल्कि गणित की समस्या का परिचय देते हुए जिस सामान्य भाषा का व्यवहार किया जाता है, उसके प्रति शिक्षकों को सचेत रहने की सख्त जरूरत होती है। इसके बहुत से उदाहरण रोजमर्रा के गणित शिक्षण से दिए जा सकते हैं। यहां एक बहुत ही सामान्य-सा उदाहरण इसे समझाने के लिए काफी होगा। जब गणित में जोड़-बाकी सिखाये जाते हैं, खासतौर से हासिल के, तो उस समय शिक्षक अक्सर इकाइयों के योग या दहाइयों या सैकड़ा के योग से क्रमशः बनने वाली दहाइयों, सैकड़ों या हजार को 'हासिल का एक' कहकर छुट्टी पा लेते हैं। लेकिन क्या यह 'एक' होता है ? यदि इसके 'मान' पर बच्चों से बात नहीं की जाए तो यह बहुत आगे तक उन्हें भ्रम में डाले रहता है।

ये ही नहीं गणित के हरेक चरण पर ऐसी ढेर समस्याएं आती हैं जो भाषा और उस अवधारणा को समझने की गहरी मांग करती हैं। यदि शिक्षक इन पर ठीक से काम करें तो, जैसा ऊपर कहा गया है, वास्तव में गणित संगीत सा आनंद और समस्याओं से जूझने की क्षमता दे सकता है। अब मुझे लगता है कि गणित की प्रकृति में समस्या होने की बजाए उसके शिक्षण में तरीकों में समस्या है। यदि शिक्षण के तरीकों को बेहतर बनाया जाए तो प्रत्येक बच्चा अच्दी तरह सीख जाता है। ◆